LEARN GEETA
तस्मात् योगी भवार्जुन

॥ श्रीहरिः ॥
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 9: राजविद्याराजगुह्ययोग

3/3 (श्लोक 16-34), रविवार, 01 फ़रवरी 2026

विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/hRmt79TSoAI

समर्पण और भक्ति से ही होगी परमात्मा की प्राप्ति

आज के सत्र का प्रारम्भ श्री ईश वन्दना, राष्ट्र वन्दना तथा श्री गुरू चरण वन्दना के साथ ही सभी संङ्कटों तथा बाधाओं का नाश करने वाले श्री हनुमान चालीसा पाठ के साथ हुआ।
श्रीभगवान् की अतिशय मङ्गलमय कृपा से हम सब लोगों का ऐसा सद्भाग्य जागृत हुआ है जो हम अपने मानव जीवन को सफल करने के लिए, उसको सार्थक करने के लिए, इसके परमोच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, अपने इहलौकिक और पारलौकिक जीवन को सफल करने के लिए हम लोग भगवद्गीता जी के अध्ययन में उसको कण्ठस्थ करने में, उसके अर्थ को समझने में और उसको सूत्रों को जीवन में लाने में अग्रसर हो गए हैं।
पता नहीं हमारे कोई इस जन्म के पुण्य कर्म हैं, हमारे पूर्व जन्मों के कोई सुकृत हैं, हमारे पूर्वजों के कोई सुकृत हैं या फिर किसी जन्म में किसी सन्त-महापुरुष की कृपा दृष्टि हम पर पड़ गई जिस कारण हमारा ऐसा भाग्योदय हो गया जो हम भगवद्गीता पढ़ने के लिए चुन लिए गए।
हम सबके मन में परम विश्वास होना चाहिए कि हमने गीता जी को नहीं चुना है अपितु हम उनके द्वारा चुने गए हैं। कोई चाहकर भी भगवद्गीता जी के अध्ययन में लग नहीं सकता।

बिनु हरि कृपा मिले नहीं सन्ता

भगवद्गीता मिल जाए इसके लिए तो बहुत बड़ी हरि कृपा चाहिए। जिसको हरि कृपा और सन्त कृपा दोनों मिलती है उसको भगवद्गीता मिलती है क्योंकि भगवद्गीता में श्रीभगवान् ने कहा-

"मामे विषयत्त्व संशयः"

जो उसको पढ़ता है मुझको प्राप्त हो जाता है। यदि सभी भगवद्गीता पढ़ लेंगे तो श्रीभगवान् का बना-बनाया खेल बिगड़ जाएगा। सब श्रीभगवान् के पास वापस पहुँच गए तो अव्यवस्था हो जाएगी इसलिए श्रीभगवान् के चुने हुए पुण्यशाली लोग ही भगवद्गीता जी को पढ़ सकते हैं।

हम नवम अध्याय का चिन्तन देख रहे हैं। यह बड़ा गूढ़ अध्याय है।
राजविद्या राजगुह्य - समस्त विद्याओं का राजा और सारी विद्याओं में गुह्यतम। गुह्य, गुह्यतर, गुह्यतम। गुह्यतम का अर्थ

है - अत्यन्त गोपनीय।
यह गुह्यतम बात साधारण तो नहीं होगी किन्तु श्रीभगवान् ने कहा, "जो मेरे भक्त हैं, वो उसको जानने के अधिकारी हैं।"

9.16

अहं(ङ्) क्रतुरहं(यँ) यज्ञः(स्), स्वधाहमहमौषधम्।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यम्, अहमग्निरहं(म्) हुतम्॥9.16॥

क्रतु मैं हूँ, यज्ञ मैं हूँ, स्वधा मैं हूँ, औषध मैं हूँ, मन्त्र मैं हूँ, घृत मैं हूँ, अग्नि मैं हूँ (और) हवन रूप क्रिया भी मैं हूँ। जानने योग्य पवित्र, ओंकार, ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद भी मैं ही हूँ। इस सम्पूर्ण जगत का पिता, धाता, माता, पितामह, गति, भर्ता, प्रभु, साक्षी, निवास, आश्रय, सुहृद्, उत्पत्ति, प्रलय, स्थान, निधान (भण्डार) (तथा) अविनाशी बीज (भी मैं ही हूँ)। (9.16-9.18)

विवेचन- श्रीभगवान् कह रहे हैं कि **हे** अर्जुन! कृत मैं हूँ ,यज्ञ मैं हूँ, स्वधा मैं हूँ, औषधि मैं हूँ, मन्त्र मैं हूँ, अग्नि मैं हूँ और हवन रूपी क्रिया भी मैं ही हूँ।
श्रीभगवान् ने दूसरे अध्याय के सोलहवें श्लोक में कहा है -

"नासतो विद्यते भावो, नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तः(स्), त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः॥२.१६॥"

सत् और असत्- ये सबको पता है। हम सबको पता है कि शरीर मरने वाला है। हमारे भीतर जो आत्मा है, वो कभी मरती नहीं है। परमात्मा अविनाशी हैं। हम विनाशशील हैं तो भी हमारा आकर्षण तो लगातार असत् पर ही बना हुआ है। अच्छा तो संसार ही लगता है। संसार की माया और आकर्षण में मन जाकर अटक जाता है। भगवान् में तो खीञ्च-खीञ्च कर लगाना पड़ता है। यदि नहीं खीञ्चोगे तो उधर तो अपने आप लग रहा है, इधर लगाना पड़ता है।
विवेचन के बाद लोग प्रश्न करते हैं कि भैया पूजा में बैठते तो हैं, माला फेरते तो हैं, ध्यान करते तो हैं किन्तु मन नहीं लगता है क्योंकि मन तो संसार में लगता है और इसलिए श्रीभगवान् ने भिन्न प्रकार से इस श्लोक को कहा।
श्रीभगवान् ने कहा- "सब कुछ मैं ही हूँ। मेरे अन्दर कुछ नहीं है।"
श्री भगवान् कहते हैं कि कृतु मैं हूँ। कृतु क्या होता है?
जो वैदिक रीति से किया जाता है उसको कृतु कहते हैं।
जो स्मार्त रीति से किया जाता है उसको यज्ञ कहते हैं।
अग्निकुण्ड पर देवताओं को जो आहुतियाँ प्रदान की जाती हैं, यदि वैदिक ढङ्ग से की जाएं, वैदिक मन्त्रों के साथ की जाएँ तो उसको कृतु कहते हैं तथा स्मार्त रीति से की जाएँ तो वो यज्ञ कहलाता है।

फिर श्रीभगवान् ने कहा है कि स्वधा अर्थात् यज्ञ में जो आहुतियाँ दी जाती हैं, वह अनेक प्रकार की होती हैं -
स्वधा- जो पितरों को अर्पण किए जाने वाला अन्न होता है उसको स्वधा बोलते हैं। तिल, जौ, बाजरा आदि पदार्थ।
औषधि- जो देवताओं को अर्पण की जाती हैं जैसे छुहारा आदि जड़ी बूटियाँ- हवन सामग्री।

हुतम यानी हवन करने की क्रिया।

पण्डित जी स्वाहा बोलते हैं तो हम यज्ञ में एक चम्मच घी या हवन सामग्री की आहुति देते हैं। श्रीभगवान् कहते हैं कि अर्जुन इन सभी में मैं ही हूँ। मेरे अतिरिक्त कुछ नहीं है।

9.17

पिताहमस्य जगतो, माता धाता पितामहः।
वेद्यं(म्) पवित्रमोङ्कार, ऋक्साम यजुरेव च।।9.17।।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं, "मैं ही सम्पूर्ण जगत् का धाता अर्थात् सबको धारण करने वाला हूँ। इस जगत् का मूल आधार मैं ही हूँ। सब कर्मों के फल को देने वाला भी मैं ही हूँ। पिता-माता और पितामह भी मैं भी हूँ।"
यहाँ श्रीभगवान् ने पितामह क्यों कहा ?
इसमें विशेष रहस्य है। सन्तों ने अपने चिन्तन में बतलाया कि श्रीभगवान् ने माता-पिता कह दिया, इतना ठीक था किन्तु पितामह कहने की क्या आवश्यकता थी? दादा जी क्यों बने श्रीभगवान्?
परमपिता परमेश्वर हम लोग यही कहते आए हैं।
श्रीभगवान् ने कहा, "नहीं-नहीं मैं परमपिता तो हूँ अपितु माँ भी हूँ।"
ये सारी सृष्टि ब्रह्मा जी ने बनाई तो ब्रह्मा जी हमारे पिता हो गये और ब्रह्मा जी का जन्म भगवान् विष्णु की नाभि से हुआ तो हमारे पिता के पिता कौन हुए?
भगवान् नारायण। नारायण के पुत्र ब्रह्मा तथा ब्रह्मा जी के पुत्र हम सब तो भगवान् नारायण हमारे कौन हुए? वे हमारे दादा जी अर्थात् पितामह हुए।

भगवान् हमारे धाता,माता और पितामह हैं।

वेद्यं(म्) पवित्रमोङ्कार - श्री भगवान् कहते हैं कि जानने में पवित्र ॐकार तथा ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद भी मैं ही हूँ। भगवद्गीता में श्रीभगवान् ने अथर्ववेद की उपेक्षा की है क्योंकि अथर्ववेद में केवल इस संसार की क्रियाओं के बारे में ज्ञान है। रथ कैसे बनाना, भवन कैसे बनाना, भोजन कैसे बनाना और अणुबम कैसे बनाना - ये सारी बातें अथर्ववेद में लिखी हैं। जितनी भी इस संसार में मनुष्य जीवन के लिए आवश्यकताएँ हैं, उन सब का ज्ञान अथर्ववेद में है। श्रीभगवान् ने उसको अनदेखा किया।
हम लोगों को लगता है कि वेद चार होते हैं। वेद चार नहीं होते।

वेदव्यास भगवान् ने वेदों के चार विभाग किए। वेद एक ही है। वेद चार नहीं है। अब आधुनिक भाषा में बच्चों को पढ़ाया जाता है। वेद कितने होते हैं?
चार- सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और ऋग्वेद किन्तु वेद चार नहीं हैं। वेद एक ही है।

जो नियत अक्षरों वाली मात्रा की ऋचायें हैं उनको ऋग्वेद कहा गया अर्थात् जैसे आप भगवद्गीता पढ़ते हैं तो अनुष्टुप छन्द में आठ-आठ-आठ-आठ के चार चरण पढ़ते हैं।
बत्तीस मात्राओं का श्लोक होता है।
बत्तीस मात्राओं के श्लोक को हम अनुष्टुप छन्द कहते हैं। चवालीस मात्राओं के श्लोक को त्रिष्टुप छन्द कहते हैं।
भगवद्गीता जी में अनुष्टुप व त्रिष्टुप दोनों प्रकार के अर्थात बत्तीस मात्राओं के और चवालीस मात्राओं के छन्द हैं।
इस प्रकार जो नियत अक्षरों वाले श्लोक जिनमें ऊपर-नीचे के सारे चरणों में मात्रायें निश्चित हैं, ऐसी ऋचायें हैं इनको ऋग्वेद कहा गया।

जो अनियत अक्षरों वाली हैं यानी जिसमें मात्राएँ सुनिश्चित नहीं हैं, ऐसी ऋचाओं को यजुर्वेद कहा गया।

जो ऋचाएँ छन्दबद्ध होकर गायी जा सकती हैं उनको सामवेद कहा गया।

जिन ऋचाओं में भवन बनाने का रथ बनाने का, अस्त्र-शस्त्र इत्यादि बनाने का और चौसठ कलाओं का वर्णन है, वो सारी अथर्ववेद कहलायीं।

वेद एक ही है किन्तु उसमें कौन सी ऋचा का सङ्कलन किस भाग में किया उसके अनुसार उसका विभाग हो गया।

9.18

गतिर्भर्ता प्रभुः(स्) साक्षी, निवासः(श्) शरणं(म्) सुहृत्।
प्रभवः(फ्) प्रलयः(स्) स्थानं(न्), निधानं(म्) बीजमव्ययम्।।9.18।।

विवेचन- "अर्जुन! प्राप्त होने वाला परमधाम, भरण-पोषण करने वाला सबका स्वामी, शुभाशुभ को देखने वाला, प्रत्युपकार (उपकार ना चाहकर हित करने वाला), सबकी उत्पत्ति-प्रलय का आधार, निधान तथा अविनाशी कारण भी मैं ही हूँ।" इस प्रकार श्रीभगवान् एक-एक बात में अपना विस्तार कर रहे हैं।

9.19

तपाम्यहमहं(वँ) वर्षं(न्), निगृह्णाम्युत्सृजामि च।
अमृतं(ञ्) चैव मृत्युश्च, सदसच्चाहमर्जुन॥9.19॥

हे अर्जुन ! (संसार के हित के लिये) मैं (ही) सूर्य रूप से तपता हूँ, मैं (ही) जल को ग्रहण करता हूँ और (फिर उस जल को) (मैं ही) वर्षा रूप से बरसा देता हूँ (और तो क्या कहूँ) अमृत और मृत्यु तथा सत् और असत् (भी) मैं ही हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन! मैं ही सूर्य के रूप में तपता हूँ। मैं ही वर्षा के लिए जल को आकर्षित करता हूँ, उसे सोखता हूँ और वर्षा बनाकर बरसाता हूँ।
मैं ही अमृत हूँ और मैं ही मृत्यु हूँ। मैं ही सत्य और मैं ही असत्य हूँ।
जो कुछ तुम्हें अनुभव में आता है, वह भी मैं ही हूँ और जो तुम्हारे अनुभव में नहीं आता, वह भी मैं ही तो हूँ।
श्रीभगवान् यहाँ पर कह रहे हैं कि सब कुछ मैं ही होने पर भी, हे अर्जुन, तुम्हारी दृष्टि कहाँ होनी चाहिए?
इस बात को श्रीभगवान् आगे विस्तार से कहते हैं।

9.20

त्रैविद्या मां(म्) सोमपाः(फ्) पूतपापा,
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं(म्) प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकम्,
अश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान्।।9.20।।

तीन वेदों में कहे हुए सकाम अनुष्ठान को करने वाले (और) सोमरस को पीने वाले (जो) पाप रहित मनुष्य यज्ञों के द्वारा (इन्द्ररूप से) मेरा पूजन करके स्वर्ग-प्राप्ति की प्रार्थना करते हैं, वे (पुण्यों के फलस्वरूप) पवित्र इन्द्रलोक को प्राप्त करके (वहाँ) स्वर्ग में देवताओं के दिव्य भोगों को भोगते हैं।

विवेचन- तीनों वेदों में किए हुए सकाम कर्म को करने वाले, सोमरस पीने वाले, पापरहित पुरुष मुझको यज्ञों के द्वारा पूजकर स्वर्ग की प्राप्ति कर लेते हैं।

वे पुरुष अपने पुण्यों के फलस्वरूप स्वर्गलोक को प्राप्त होकर स्वर्ग में दिव्य देवताओं के भोगों को भोगते हैं।

इस श्लोक में एक भ्रम आता है। सोमरस पीने वाले, लोग पूछते हैं कि श्रीभगवान् ने तो यहाँ पर मदिरा पीने की मान्यता कर दी। यहाँ समझें कि सोमरस का अर्थ मदिरा न होकर सोमवल्ली नामक एक लता से है जो केवल स्वर्ग लोक में ही मिलती है।

हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों द्वारा सोमवल्ली लता को स्वर्ग से यहाँ पृथ्वी पर लाया गया। वह लता बड़ी असाधारण है, अति विशिष्ट है।

उसकी विशिष्टता यह है कि जब पारे की भस्म मिलाकर उस लता को भूमि में बोया जाता है तो प्रतिपदा से अमावस्या तक उस लता की एक-एक पत्ती गिरती जाती है और फिर अमावस्या से अगली पूर्णिमा तक उसमें एक एक पत्ती आती जाती है और जो पत्ती आती है उसके नीचे गाँठे बनती जाती है। पारे की भस्म के साथ मिलकर सोमावल्ली का रस इन विशेष प्रकार की गाँठों में सङ्कलित होता रहता है। इन गाँठों का रस बहुत अमृतमय और शरीर को पुष्ट करनेवाला होता है क्योंकि सोमावल्ली स्वर्गलोक की लता है।
इसकी केवल एक गाँठ का रस पीने पर कई महीनों तक भूख-प्यास नहीं लगती। जब हमारे ऋषि-मुनि तपस्या करते थे तो वे सोमवल्ली लता का रस एक बार पीकर कई महीनों तक भूख-प्यास से निवृत्ति पा लेते थे और बिना किसी बाधा के अपनी तपस्या पूर्ण करते थे।
इस सोमवल्ली लता के रस को सोमरस कहा गया।

समय के साथ मदिरा पीनेवाले लोगों ने कहा हमारा तो सोमरस मदिरा है। हम तो इसी से कई महीनों तक तृप्त रहते हैं। यह एक बार मिल जाए तो हमें और कुछ नहीं चाहिए। कालान्तर में लोग मदिरा को ही सोमरस कहने लगे और ऐसा भ्रम फैल गया मानो मदिरा का उपनाम सोमरस है।

मदिरा का उपनाम सोमरस नहीं है। सोमरस तो हमारे ऋषि मुनियों के द्वारा उपयोग में लिया जानेवाला दिव्य पदार्थ था।

श्रीभगवान् ने कहा कि वे लोग पुण्यशाली हैं जो सोमरस पीते हैं। सोमरस साधारण लोग नहीं पीते।

श्रीभगवान् ने कहा हे अर्जुन! वेदों में सकाम कर्मों का वर्णन है जैसे स्वर्गलोक प्राप्ति का अनुष्ठान और पुत्र-प्राप्ति अनुष्ठान आदि।

दशरथ जी को पुत्र नहीं हो रहा था तो वशिष्ठ मुनि के कहने पर उन्होंने श्रृङ्गी ऋषि को बुलाया। श्रृङ्गी ऋषि ने पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया। यह पुत्र कामेष्टि यज्ञ वेदों से ही आया। इस यज्ञ को करने पर दशरथ जी को चार पुत्रों की प्राप्ति हुई। यह एक सकाम अनुष्ठान था। सकाम यानी कामना के साथ।

कामना के साथ अनुष्ठान करने पर देवता उस कामना की पूर्ति कर देते हैं।

जीवन भर उत्तम पुण्य कर्म किए तो मरने के बाद स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है, उत्तम लोकों की प्राप्ति होती है। देवताओं के भोगों को भोगने को प्राप्ति हो जाती है।

9.21

ते तं(म्) भुक्त्वा स्वर्गलोकं(वँ) विशालं(ङ्),
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं(वँ) विशन्ति।
एवं(न्) त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना,
गतागतं(ङ्) कामकामा लभन्ते॥9.21॥

वे उस विशाल स्वर्गलोक के (भोगों को) भोगकर पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक में आ जाते हैं। इस प्रकार तीनों वेदों में कहे हुए सकाम धर्म का आश्रय लिये हुए भोगों की कामना करने वाले मनुष्य आवागमन को प्राप्त होते हैं।

विवेचन- वे इस विशाल स्वर्गलोक को भोगकर पुण्य क्षीण होने पर फिर से मृत्यु लोक को प्राप्त होते हैं तथा इस प्रकार स्वर्ग के साधन रूप तीनों वेदों में कहे हुए सकाम कर्म का आश्रय लेने वाले और भोगों की कामना वाले पुरुष बारम्बार आवागमन को प्राप्त होते हैं अर्थात् पुण्य के प्रभाव से स्वर्ग में जाते हैं। पुण्य क्षीण होने पर वापस मृत्यु लोक में आते हैं।

श्रीभगवान् कह रहे हैं, "देखो, ये वेदों में जो कर्म बतलाए हैं, ये सब बढ़िया हैं।"

इनके द्वारा अनुष्ठान किया जाए तो इस प्रकार के भोगों की प्राप्ति हो जाती है। स्वर्गलोक की भी प्राप्ति हो जाती है। एकदम पक्की बात है। इसमें एक शर्त है कि वो प्राप्ति सदा के लिए नहीं होती। **सकाम अनुष्ठान से जो प्राप्ति हुई, जो भोग प्राप्त हुआ वो हमेशा नहीं रहने वाला। उसका एक काल है।**

जैसे कभी कोई फाइव स्टार होटल में जा कर रहे तो फाइव स्टार होटल में जाकर अपना क्रेडिट कार्ड स्वाइप कर लेते हैं। अब मान लो उस क्रेडिट कार्ड में एक लाख रुपए की सीमा थी। उस होटल में दस हजार रुपए प्रतिदिन का किराया लगता है तो दस दिन तक का किराया वहाँ पर जमा हो गया। दस दिन तक फाइव स्टार होटल में बड़ी आवभगत होती है। प्रतिदिन प्रात: कक्ष में नाश्ता आता है। सब कहते हैं, "सर, सर, पूल सर्विस में जाइए। सर, स्पा सर्विस में जाइए। सर, और कुछ रूम सर्विस चाहिए!"

रिसेप्शन से नित्य फोन आता है, रूम सर्विस वाले लोग आकर पूछते हैं। जितनी बार आप लॉबी में आते हैं, बड़ी अच्छी पद्धति से लोग अभिवादन करते हैं, आपको प्रणाम करते हैं किन्तु जैसे ही दस दिन पूरे हुए रिसेप्शन से फोन आता है 'सर, आपका क्रेडिट कार्ड का बैलेंस पूरा हो गया है अतः आपको ग्यारह बजे चेक आउट करना पड़ेगा।'

'अरे यार तुमने दस दिन तक मेरा इतना आतिथ्य किया है। कल तक तो पूछताछ कर रहे थे। अब इतनी कठोरता से ग्यारह बजे तक जाने को कह रहे हो, शाम तक चला जाऊँगा।'
'नहीं सर, असम्भव। ग्यारह बजे आपको चेक आउट करना ही पड़ेगा नहीं तो कोई दूसरा क्रेडिट कार्ड दीजिए अथवा नगद राशि दीजिए। बिना पैसे के तो हम आपको ग्यारह बजे के बाद नहीं रख सकते।'
'अच्छा कोई बात नहीं। घण्टा- दो घण्टा तो रहने दो।'
'सर ग्यारह के बाद आप नहीं रह सकते। आपको चेक आउट करना ही पड़ेगा।'
किराया पूरा होने के बाद वो एक घण्टे के लिए भी आपकी बात मानने को तैयार नहीं हैं।

इसी प्रकार हमारे क्रेडिट कार्ड में जैसे पैसे की सीमा होती है वैसे ही हमारे भाग्य में हमारे सञ्चित प्रारब्ध में हमारे पुण्यों की सीमा होती है।
जिस पुण्य के बल पर स्वर्गलोक में पहुँचे हैं और जब तक वहाँ पुण्य हैं उसका बैलेंस है तब तक तो स्वर्गलोक में आराम से आनन्द लेकर दिव्य भोगों को भोगेंगे किन्तु जैसे ही पुण्य पूरे हुए, तब क्या होता है?
यहाँ तो रिसेप्शन से फोन आता है किन्तु वहाँ कोई फोन नहीं आता है।

इन्द्रदेव कहते हैं, "उल्टा खड़े हो और हम आ गए वापस मृत्यु लोक में।"

पुनरपि जननम पुनरपि मरणम।
पुनरपि जननी जठरे शयनम।।

फिर से वहीं आए, फिर से वही परिश्रम कर रहे हैं।
श्रीभगवान् कह रहे हैं कि अर्जुन, स्वर्गलोक के जो दिव्य भोग प्राप्त हुए वो टिके कहाँ?

कुछ समय बाद वापस मनुष्य बनना पड़ा, मृत्यु लोक में आना पड़ा तो ये स्थिति चिरस्थाई नहीं है, ये अस्थाई है।

चार दिन की चाँदनी फिर अन्धेरी रात

श्रीभगवान् कहते हैं कि वापस तो वहीं आना पड़ेगा और यह कोई अच्छी बात नहीं है। थोड़े समय का आनन्द लो, फिर वापस आकर परिश्रम करो। फिर आनन्द लो, फिर आकर दुःख भोगो।
तुम स्थाई रूप से निवास करने के लिए क्यों नहीं आते? (Why don't you come for the permanent place?)
जहाँ पर आकर फिर वापस नहीं जाना पड़ेगा और जहाँ पर आने के बाद कोई कष्ट ही नहीं, कोई दुःख ही नहीं है। वह सुख कभी समाप्त नहीं होता और वहाँ पर दुःख का कभी आगमन नहीं होता।
अर्जुन! ऐसे जो मेरे भक्त हैं उनका ध्यान मैं रखता हूँ।

मानस में गोस्वामी जी ने भी कहा है -

एहि तन कर फल बिषय न भाई। स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई॥
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं। पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं॥1॥

स्वर्ग मिल गया तो भी अन्त तो दु:खदाई है, वापस तो मनुष्य लोक में आना ही पड़ेगा। अन्य सभी सम्प्रदायों में मोक्ष की कल्पना नहीं है। स्वर्ग-नर्क की कल्पना प्रत्येक सम्प्रदाय में है। कोई उसको जन्नत-दोज़ख़ बोलता है।
कोई उसको हेवन-हेल (Heaven, Hell) कहता है।
कोई वेनला बोलता है।

भिन्न-भिन्न भाषाओं में, भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में उसके भिन्न-भिन्न नाम हैं किन्तु स्वर्ग-नर्क ये सभी मानते हैं। भारतीय दर्शन के अतिरिक्त, सनातन परम्परा के अतिरिक्त किसी ने भी मोक्ष की बात नहीं कही है।
भारतीय सनातन परम्परा को छोड़कर कोई भी संसार की संस्कृति मोक्ष तक नहीं पहुँची। स्वर्ग तक सब पहुँचे।

मोक्ष- यह केवल भारतीय संस्कृति की कल्पना है।

श्रीभगवान् कहते हैं कि अर्जुन भोग-इच्छा में फँसे रहोगे तो बार-बार नर्क ही भोगना पड़ेगा।
अर्जुन को मन में विचार आया कि भोग-इच्छा भी छोड़ दें और उधर भी नहीं पहुँचे तो अटक तो नहीं जाएंगे। हमारी स्थिति छिन्न-भिन्न बादलों वाली तो नहीं हो जाएगी।
छठे अध्याय में अर्जुन पूछते हैं-

"कच्चिन्नोभयविभ्रष्टः(श्), छिन्नाभ्रमिव नश्यति।
अप्रतिष्ठो महाबाहो, विमूढो ब्रह्मणः(फ्) पथि॥६.३८॥"

हमारे साथ ऐसा तो नहीं होगा कि

ना दुनिया मिली ना बिसाल-ए-सनम,
ना इधर के रहे ना उधर के रहे।

श्रीभगवान् कहते हैं , "नहीं, परिणाम की तुम चिन्ता ही मत करो।"
मेरे मार्ग में चलने वाला यदि मुझ तक नहीं भी पहुँच पाया तो अगले जन्म में अत्यन्त पुण्यवान, अत्यन्त धार्मिक श्रीमान पुरुषों के घर में योग भ्रष्ट योगी के रूप में उसका जन्म हो जाता है। जो बचपन से गीता पढ़ने लग गए हैं, यह वही पूर्व जन्म के भटके हुए हैं जो पूरे नहीं पहुँचे परन्तु यहाँ तक पहुँच गए।

हम लोग नाटक करते हैं कि हमें कुछ भी नहीं चाहिए। हमें तो ज्यादा खाने की इच्छा नहीं है। अब तो मैं सङ्ग्रह भी नहीं करता। अब तो मैं साड़ियाँ भी नहीं लेती किन्तु थोड़ी बच्चों की चिन्ता करनी पड़ती है।

मनुष्य की भोग वृत्ति कहीं ना कहीं अटकी रहती है कि कैसे मुझे कुछ ज्यादा मिल जाए। फिर कुछ लोग कहते हैं कि बुढ़ापे का काम कैसे चलेगा? बच्चों का क्या होगा? गृहस्थी कैसे चलेगी? गीता पढ़नी तो है किन्तु अभी कैसे पढ़ेंगे? इसकी शादी कर दूँ, इसका ये कार्य पूरा कर दूँ, पोता हो जाए।
घर का उत्तरदायित्व कभी पूरा होता है क्या? किसी का पूरा हुआ है आज तक?

कोई-न-कोई बहाना लेकर मनुष्य अपनी भोग-इच्छा को ही पूरी करता रहता है।
श्रीभगवान् कहते हैं कि दो बातों का हमेशा ध्यान करो।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां(यँ), ये जनाः(फ्) पर्युपासते।
तेषां(न्) नित्याभियुक्तानां(यँ), योगक्षेमं(वँ) वहाम्यहम्॥9.22॥

जो अनन्य भक्त मेरा चिन्तन करते हुए (मेरी) भली भांति उपासना करते हैं, (मुझ में) निरन्तर लगे हुए उन भक्तों का योगक्षेम (अप्राप्त की प्राप्ति और प्राप्त की रक्षा) मैं वहन करता हूँ।

विवेचन- अर्जुन जो अनन्य प्रेमी भक्तजन मुझ परमेश्वर का नित्य चिन्तन करते हुए निष्काम भाव से मुझे भजते हैं, उन नित्य निरन्तर, मेरा चिन्तन करने वाले लोगों का योगक्षेम मैं वहन करता हूँ।
श्रीभगवान् कहते हैं कि दो बातें विशेष हैं, एक तो अनन्य- ना अन्य.
मेरो तो गिरधर गोपाल दूसरो ना कोई।

अनन्य - यह अनन्य बहुत जटिल शब्द है। इसका अर्थ है ना अन्य। कुछ लोग इसकी भी बड़ी गलत धारणा करते हैं।
विवेचन के बाद प्रश्न पूछते हैं कि मैं तो शिव जी का भजन करती थी लेकिन आजकल गीता पढ़ने लगी हूँ तो मुझे लगता है कृष्ण की भक्ति करके कोई गलती हो रही है क्या?
राम जी की पूजा करने वाले को लगता है कि मैं शिव जी की पूजा कैसे करूँ?
कृष्ण की पूजा करने वाले को लगता है कि मैं शिवजी की पूजा कैसे करूँ?
शिव जी की पूजा करने वाले को लगता है कि मैं राम जी की पूजा कैसे करूँ?

अनन्य का अर्थ ये बिल्कुल नहीं है। वह तो एक ही है। पूजा चाहे श्रीराम की करो, श्रीकृष्ण की करो, श्रीशिव की करो- वो भिन्न थोड़ी हैं।
आप मुझे चश्मे वाले भैया कहो, आप तिलक वाले भैया कहो, जैकेट वाले भैया कहो, आशु भैया कहो, गोयल भैया कहो, डॉक्टर भैया कहो, गीता वाले भैया कहो,- मैं थोड़ी अलग हो जाता हूँ । मैं तो वही रहने वाला हूँ।

आप कभी-कभी सब्जी खरीदने जाते हैं, पैसे दिए और बचे हुए पैसे लेना भूल गए और मुड़ कर निकल गए। अब उस सब्जी वाले को तो आपका नाम पता नहीं तो क्या बोलेगा?
ए बहन जी, ए लाल साड़ी वाली बहन जी, ए नीले कुर्ते वाले भैया। हमारा नाम लाल साड़ी वाली बहनजी नहीं है किन्तु हम सुनकर देखते हैं। ठीक इसी प्रकार से श्रीभगवान् को किसी भी नाम से पुकारो, वो तो सुनकर देखने वाले ही हैं। उनको पता लग जाए कि आप उनको पुकार रहे हैं। बस तो उन्हें राम, कृष्ण, शिव कहने से अन्तर नहीं पड़ता है। फिर क्या बात है?

एक इष्ट हो। इष्ट का सीधा अर्थ है जो मुझे चाहिए। अनिष्ट का सीधा अर्थ है जो मुझे नहीं चाहिए।

अब आप कहेंगे एक इष्ट कैसे हो सकता है?
कोई कहेगा मेरे इष्ट शिव जी हैं तो पहले इष्ट शब्द का अर्थ समझना चाहिए।
इष्ट क्या होता है?
हिन्दी प्रान्त के जो लोग हैं, उन्होंने कभी घर में विवाह के निमन्त्रण-पत्र छपाए होंगे या किसी का आया हुआ पढ़ा होगा तो उसमें लिखा होता है कि इष्ट-मित्रों के साथ अवश्य पधारें।
अनिष्ट शब्द आपने पढ़ा है या सुना है कि कुछ बुरा हो गया। अरे राम-राम बड़ा अनिष्ट हो गया।

मेरे इष्ट शिवजी है और मैं शिवजी के पास जाकर कहता हूँ कि मुझे पुत्र मिल जाए, मेरी शादी हो जाए, मेरा व्यापार ठीक चल जाए, मेरे पास और धन हो जाए, मेरा स्वास्थ्य ठीक हो जाए, मेरे बच्चों का स्वास्थ्य ठीक हो जाए। शिवजी के पास जाकर मैंने शिवजी को माँगा या शिवजी से कुछ और माँगा?

-

तेरा रामजी करेंगे बेड़ा पार। उदासी मन काहे को करे।।

हमारी त्रुटि यह है कि हम डोरी नहीं सौंपते हैं।

द्रौपदी चिल्लाती रही कि कन्हैया बचाओ, बचाओ किन्तु श्रीभगवान् नहीं आए। बाद में द्रौपदी ने इस बात पर बड़ा झगड़ा किया कि कृष्णा आप इतने अन्त में क्यों आए? थोड़ी और देर लगाते तो गड़बड़ी हो जाती!
श्रीभगवान् ने कहा, "नहीं, मैं तो शीघ्रता से आया था।" द्रौपदी बोली, "कैसे झूठ बोलते हो? कितनी देर तक मैं भी चिल्लाती रही! तुम एकदम अन्तिम छोर पर पहुँचे।" श्रीकृष्ण बोले, "नहीं-नहीं। मैं तो तुमने जब बुलाया तब ही आ गया।"
फिर बोले कि तुमने मेरा आश्रय कब लिया?
यह बात द्रौपदी को समझ में नहीं आयी।
श्रीभगवान् बोले कि हे द्रौपदी याद करो, जब दुशासन ने तुम्हारा चीर खीञ्चना शुरू किया तो सबसे पहले तुमने धृतराष्ट्र को देखा अर्थात् तुमने अपने ससुर जी का भरोसा किया कि वो तुमको बचाएंगे। फिर तुमने भीष्म पितामह की ओर देखा। फिर तुमने अपने पाँचों पतियों की ओर देखा। जब किसी ने तुम्हारी सहायता नहीं की तब भी तुमने मुझे नहीं बुलाया। तुम मेरा नाम ले रही थी, बुला नहीं रही थी। फिर तुम ने अपनी शक्ति का भरोसा किया। सोचा कि मैं खीञ्चने थोड़ी दूँगी, अपने हाथों के बल से बचाने का प्रयास किया। मैं क्षत्राणी हूँ किन्तु दुशासन तो महारथी था। उसका बल बहुत अधिक था तो जब तुमको लगा तुम सम्भाल नहीं पाओगी।
जैसे ही तुमने दोनों हाथ जोड़कर कहा, "कान्हा बचाओ", मैं उसी क्षण आ गया।
जब तक तुमने मुझे डोरी नहीं सौपी, तब तक मैं नहीं आया। जब कोई डोरी सौंपता है तभी मैं आता हूँ।

हम आश्रय लेते हैं धन का। हम आश्रय लेते हैं अपने सम्पर्कों का। हम आश्रय लेते हैं अपनी बुद्धि का। हम आश्रय लेते हैं अपने बल का तो श्रीभगवान् कहते हैं कि अपना काम स्वयं कर।

श्रीभगवान् उसको सम्भालते हैं जो श्रीभगवान् का हो जाता है जिसको श्रीभगवान् के अलावा किसी का आश्रय नहीं, उसको श्रीभगवान् सम्भालते हैं।

डोरी सौंप के तो देख एक बार, उदास मन काहे को करे
तेरा राम जी करेंगे बेड़ा पार, उदास मन काहे को करे
तू निर्दोष तुझे क्या डर है, पग पग पर साथी ईश्वर है।
सच्ची भावना से कर ले पुकार, उदास मन काहे को करे
तेरा राम जी करेंगे बेड़ा पार, उदास मन काहे को करे।

शिष्य ने पूछा, "गुरु जी सच में भगवान ऐसा करते हैं।" गुरुजी ने कहा, "शास्त्रों की बात पर सन्देह, गीता पर सन्देह करते हो।" शिष्य ने कहा, "गुरु जी सन्देह नहीं। मैं बहुत बड़ा पापी हूँ। आपके पास आया तब से तो सुधर गया। आपको पता नहीं मैंने क्या-क्या किया है।"
गुरु जी बोले, "पगले तुम इस जन्म के पाप की बात कर रहा है। अनेक जन्मों के पाप हों तो भी कोई बात नहीं।" शिष्य ने कहा, "क्या? अरे जन्मों की बात कैसे सुधरेगी। जन्मों की सुधरने में तो कई जन्म लगेंगे।" गुरु जी ने कहा,

बिगड़ी जन्म अनेक की सुधरे अबहीं आज ।
होहिं राम को नाम जपि, तुलसी तज कुसमाज।।

एक बार कुसमाज को छोड़कर, गलत आदतों को छोड़कर, पाप को छोड़कर जो श्रीभगवान् के भजन में लग गया, उसके एक जन्म की नहीं अनेकों जन्मों की आग, अनेकों जन्मों के पाप श्रीभगवान् काटते हैं।
किसी ने पूछा कि थोड़ा नाम भगवान् का ले लिया तो उससे अनेक जन्मों के पाप कैसे कटते हैं?
महापुरुषों ने इसके लिए बड़ा अच्छा उदाहरण दिया।
'तुम्हें ये चार पाँच घास के तिनके जलाने हों तो कितनी तिली चाहिए?'
'एक तिली में जल जाएगी गुरुजी।'
गुरु जी ने कहा, "अच्छा घास का पूरा ढेर और पूरे बगीचे की घास काट कर एक जगह इकट्ठी कर दी। उसको जलाने के लिए तीली कितनी चाहिए?"
" तब भी तीली तो एक ही चाहिये।"
जैसे भूसे का ढेर थोड़ा हो या बड़ा हो वो एक तीली से भस्म हो जाता है।

समर्पण की एक तीली हो तो फिर चाहे इस जन्म के पाप हों या अनेक जन्मों के, सब कट जाते हैं। श्रीभगवान् का नाम अनेक-अनेक जन्मों का पाप भस्म कर देता है।

योगक्षेमं वहाम्यम - इसका अर्थ यह नहीं है कि श्रीभगवान् मेरी कामनाएँ पूरी करेंगे। श्रीभगवान् को जो ठीक लगेगा वो आवश्यकता पूरी करेंगे। हमें जो चाहिए वो सब नहीं मिलेगा। हमारी इच्छाएं नहीं पूरी होंगी। प्रत्येक कामना नहीं पूरी होगी।
हमें श्रेयस मिलेगा, प्रेयस नहीं। जो हमारे लिए आवश्यक है उसकी रक्षा होगी।

एक बार एक गाँव में एक महात्मा जी कथा कर रहे थे। अच्छे पण्डित जी थे तो उन्होंने इसी श्लोक पर ये सब बातें कहीं। कथा में एक थोड़ा हठीला बालक खड़ा हो गया और बोला, "पण्डित जी आप झूठ बोलते हो।"
पण्डित जी ने कहा, "मैंने ऐसा क्या झूठ बोला।"
बालक ने कहा कि आप बोले श्रीभगवान् सबकी रक्षा करते हैं तो मैं यदि खाना नहीं खाऊँ तो क्या भगवान् आकर मुझे खिलाएंगे।
पण्डित जी ने कहा, "ऐसा थोड़ी होता है। मैं गीता की बात बोलता हूँ।"
बालक बोला, "नहीं, आपकी बात झूठी है और मैं इसे सिद्ध करूँगा।"
अब बाकी गाँव वाले उसको बैठाने लगे किन्तु वह हठी बालक नहीं माना व बोला कि आप कथा करके जाओ और मैं यही बैठा हूँ और देखना मैं कल तक कुछ खाऊँगा ही नहीं, मुझे कौन खिलाता है?
कैसे श्रीभगवान् मेरा योगक्षेम वहन करेंगे।
पण्डित जी ने समझाया किन्तु वह हठी बालक बात मानने के लिये तैयार नहीं था।

जब कथा पूरी हुई तब सबने उसे घर जाने के लिये समझाया किन्तु वह नहीं माना। पण्डित जी ने भी उसको कथा के मञ्च से उतरकर समझाने का प्रयास किया किन्तु वह अपनी बात पर अड़ा रहा कि श्रीभगवान् उसे कैसे खिलाते हैं ?
वह पण्डितजी को झूठा सिद्ध करने के लिये अडिग था।
पण्डित जी बोले, "देखो, बेटा ये बात मेरी नहीं श्रीभगवान् की कही बात है तथा श्रीभगवान् की बात झूठी करने की शक्ति तेरी तो क्या किसी की भी नहीं है।"
पण्डित जी भी यह कह कर चले गए। अब घर वाले भी समझा-समझा कर थक गए परन्तु वह बालक मानने को तैयार नहीं हुआ तो अन्त में सब लोग पण्डित जी के पास पहुँचे कि अब क्या करें?

जब घरवालों ने बहुत समझाने का प्रयास किया तो यह बालक जङ्गल में भाग गया और कहने लगा कि मैं तो जङ्गल में भाग जाऊँगा, अब मुझसे बात ही मत करो तथा भागकर पेड़ पर चढ़ गया।
गाँव के लोग वापस पण्डित जी के पास आए।
पण्डित जी ये कठिनाई तो बड़ी हो गई। पहले तो पण्डाल में बैठा था, अब हमने समझाया तो भागकर जङ्गल में पेड़ पर जाकर बैठ गया।
पण्डित जी ने परामर्श दिया कि एक थाली में उसकी रुचिनुसार भोजन लगाकर जङ्गल में पेड़ के नीचे रख आओ। रात्रि में भूख लगेगी तो अपने आप उतरकर खाएगा।
घर वालों ने ऐसे ही किया। घर वाले उसकी आदत जानते ही थे इसलिए उसकी माँ व बहन ने मिलकर उसके लिए पकवान बनाए जो उसको पसन्द था। फिर खीर, पूरी, मिठाई और बढ़िया सब्जियाँ लगाकर थाली पेड़ के नीचे रख दी।
अब इसको भूख भी लग रही है। नीचे से खाने की सुगन्ध भी आ रही है किन्तु मैं तो खाऊँगा नहीं। पक्का हठ करके बैठा था।

रात को बारह बज गए। सहसा डाकुओं का गिरोह वहाँ पर आया। यह उनका अड्डा था। नित्य जो चोरी करते, डाका डालते उसका हिसाब बाँटने के लिए वो इसी पेड़ के नीचे आते थे। यह बात तो किसी को पता नहीं थी। इस बालक को भी पता नहीं थी। अचानक बन्दूक लेकर सारे डाकू आकर बैठे तो उसको तो एकदम डर लगने लगा। हालत खराब हो गई। ये डाकू कहाँ से आए?
'मैं कहाँ फँस गया?'
लेकिन अब तो क्या कर सकते हो?
डाकू आ गए। चुपचाप बैठा ऊपर काँप रहा है। डाकू अपना हिसाब करने लगे।
हिसाब करते-करते किसी डाकू ने कहा, "अरे मुझे बड़ी अच्छी भोजन की सुगन्ध आ रही है।" किसी और को भी आ रही है। बोला, "मुझे भी आ रही है। मैं भी सोच रहा हूँ कि इतनी अच्छी खीर की सुगन्ध आ रही है।" कोई कहता है कि 'पूरी की महक आ रही है। हाँ, आ तो रही है।' पाँच-छह डाकुओं ने कहा, "आ तो रही है। देखो कहाँ से भोजन ही सुगन्ध आ गई। जङ्गल में कहाँ से भोजन आएगा।"

देखा तो पेड़ के नीचे एक थाली रखी है। रुमाल से ढकी हुई है। रुमाल हटाकर सब ने कहा, "बढ़िया भोजन खाएंगे।"
सरदार ने कहा, "रुको, इस जङ्गल में हमारे लिए थाली लाकर कौन रखेगा? अवश्य ही किसी को पता लग गया है कि यह हमारा अड्डा है और किसी ने जहर मिलाकर ये भोजन रखा है। जिस से कि हम खाकर मर जाएं और वो हमारा माल लेकर भाग जाए। यह भोजन हमें मारने के लिए लाया गया है।"
चारों ने कहा, "सही बात है। जङ्गल में हमारे लिए कौन भोजन लाएगा और जो हमारा माल लूटने के लिए हमें मारने के लिए आया होगा, वो यही कहीं छुपकर बैठा होगा, ढूँढो।"

अब यह बालक डर से काँपा कि अब तो मैं फँसूगा। डाकूओं ने ढूँढना आरम्भ किया और ये ऊपर डर से थरथरा रहा था।
थोड़ी पत्तियों की आवाज हुई तो एक डाकू ने ऊपर देखा और बोला, "मिल गया। देखो, सरदार तुम सही कह रहे थे। यही है वह जो जहर वाली थाली लेकर आया है और हमें खिलाकर हमारा माल लेकर भाग जाना चाहता है।"
"नीचे आओ।" सरदार ने डाँटा। यह आने को तैयार नहीं था। सरदार बोला, "नीचे आओ नहीं तो यहीं से गोली मारेंगे।"
यह बेचारा नीचे गिर पड़ा। गिरा तो हड्डियाँ टूटीं और डाकुओं ने इसको पीटना शुरू किया। 'सच बता। ये थाली तेरी है कि नहीं? ये थाली तेरी है कि नहीं?'
अब इसको जब चार-पाँच थप्पड़ पड़े तो बोला "थाली तो मेरी है।" डाकू बोले, "क्यों लाया? जहर मिलाकर लाया?" बालक

बोला, "नहीं, जहर नहीं लाया।"
एक डाकू ने कहा, "सरदार ये जहर वाला खाना इसी को खिलाते हैं। ये हमको मारने आया तो हम इसी को मारेंगे।"
बालक बोला, "खाना तो मैं खाऊँगा ही नहीं।" डाकू बोला, "खाएगा कैसे नहीं?" बालक बोला, "भोजन नहीं करूँगा, जो मर्जी कर लो।"
डाकू बोले, "करेगा कैसे नहीं?"

अब दो डाकुओं ने बालक के हाथ पकड़े, एक डाकू इसके ऊपर बैठा। एक डाकू ने इसका मुँह खोला और ठूँस-ठूँस कर खिलाते रहे। अब यह निगल नहीं रहा था तो एक थप्पड़ मारा, दूसरा थप्पड़ मारा और एक कौर खिलाया, दो कौर खिलाया और थप्पड़ मार-मार कर इसको खिलाया। ये हर बार बोलता कि मैं खाऊँगा नहीं तो एक थप्पड़ और पड़ता। छह-सात कौर खाए।
अब बालक ने कहा, "मैं बोल रहा था कि जहर नहीं है। देखो मैं मरा नहीं ना।"
डाकुओं ने उस बालक को वहाँ से भगा दिया।
अब रात को बेचारा पेड़ से गिरा था तो वैसे ही पसलियाँ टूट गईं थीं। डाकुओं ने भी इतना मारा।
उसका पूरा मुँह चोटिल और लङ्गड़ाते हुए पण्डित जी के पास पहुँचा और द्वार खटखटाया। पण्डित जी ने दरवाजा खोलकर पूछा, "क्या हुआ बेटा?"
बालक बोला, "आपने कहा था कि श्रीभगवान् खिलाते हैं किन्तु ये नहीं बताया था कि ठूँस-ठूँस कर, मार-मार के खिलाते हैं। श्रीभगवान् ने तो बहुत मार-मार कर खिलाया, ठूँस-ठूँस कर खिलाया। पण्डित जी आपकी बात सही है, मेरी गलती हो गई।"
श्रीभगवान् उस बालक की बात के लिए नहीं आए थे। श्रीभगवान् पण्डित जी के वचन की रक्षा के लिए आए थे। बालक के हठ के कारण श्रीभगवान् नहीं आए किन्तु बालक के हठ में उस उत्तम सन्त की बात झूठी ना हो जाए इसलिए भगवान वहाँ पर आए।

जो श्रीभगवान् के नाम का आश्रय करता है, भगवान् उसकी रक्षा करते हैं।

9.23

येऽप्यन्यदेवता भक्ता, यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय, यजन्त्यविधिपूर्वकम्।।9.23।।

हे कुन्तीनन्दन! जो भी भक्त (मनुष्य) श्रद्धापूर्वक अन्य देवताओं का पूजन करते हैं, वे भी मेरा ही पूजन करते हैं, (पर करते है) अविधिपूर्वक अर्थात् देवताओं को मुझसे अलग मानते हैं।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं, "अर्जुन! यद्यपि श्रद्धा से युक्त जो सकाम भक्त देवताओं का पूजन करते हैं, वो भी मेरा ही पूजन करते हैं किन्तु उनका वो पूजन करना अविधिपूर्वक है।"

कुछ लोगों को इस श्लोक में भी बड़ी शङ्का हो जाती है। आगे के दो श्लोकों में भी बड़ी शङ्का हो जाती है। श्रीभगवान् ये क्या कह रहे हैं?

श्रीभगवान् कह रहे हैं, "आप जो भी देवताओं का पूजन करते हो, वो भी मेरा ही पूजन है किन्तु जो ये जानते नहीं कि वो मेरा पूजन कर रहे हैं और देवताओं को ही समझकर पूजन करते हैं, उनका पूजन अविधिपूर्वक है।"
क्यों?
आपके घर में चोरी हुई। आप थाने में रिपोर्ट लिखाने गए। थानेदार साहब बड़े अच्छे आदमी थे। उन्होंने उस चोर को पकड़ लिया। आपका जो माल चोरी हुआ था वह आपका माल वापस दे दिया।
आपने कहा, "थानेदार साहब! सच सबसे अच्छे आदमी तो आप हैं। आज से मैं वोट आपको दूँगा।"
थानेदार ने कहा, "मुझे! मैं थोड़ी चुनाव में खड़ा होता हूँ।"
"नहीं-नहीं मैं तो आपको ही वोट दूँगा। आप ही मेरे लिए सबसे बड़े नेता हैं। आप ही मेरे मुख्यमन्त्री, आप ही मेरे प्रधानमन्त्री।"

अब ये अविधि हो गई कि नहीं। थानेदार ने जो उसका माल ढूँढ कर दिया वो दिया किसकी शक्ति से? वो कार्य मुख्यमन्त्री और प्रधानमन्त्री की शक्ति से सम्पन्न हुआ।

देवता जो वरदान देते हैं वो श्रीभगवान् की शक्ति से देते हैं। अब आप कहेंगे देवता कौन हैं और श्री भगवान् कौन हैं?
जिसका जन्म हुआ और जिसकी मृत्यु होगी वो सब देवता हैं। स्वर्ग लोक में रहने वाले सभी लोग देवता होते हैं।
जैसे मनुष्य लोक में रहने वाले सभी लोग मनुष्य होते हैं। पृथ्वी लोक में रहने वाले सभी लोग मनुष्य होते हैं। इसी प्रकार स्वर्ग लोक में रहने वाले सभी लोग देवता होते हैं।
सब लोग वरदानी देवता नहीं होते। जैसे पृथ्वी लोक में रहने वाले सब लोग मन्त्री और प्रधानमन्त्री और राष्ट्रपति नहीं हैं। यहाँ पर कुछ ही लोग प्रधानमत्री, राष्ट्रपति और मन्त्री होते हैं। ऐसे ही देवताओं में भी जो वरदानी देवता होते हैं वो जो उनमें से उनके बॉस होते हैं, चीफ होते हैं वो भी विशेष होते हैं। वहाँ रहने वाले सभी देवता हैं किन्तु प्रत्येक देवता का अपना काल है। ये भी जन्मते और मरते हैं।

हमारे द्वारा भी अत्यन्त पुण्य कर्म किया जाए तो हम में से कोई भी इन्द्र बन सकता है।
आपने कथाओं में पढ़ा है कि इन्द्र का सिंहासन हिलने लगा। किसी ने इतनी तपस्या कर ली तो इन्द्र देव को लगा यह मुझे हटा कर इन्द्र बन जाएगा। इन्द्र ने उसको अप्सरा भेजकर भटकाया कि इसको गिराओ भाई, अन्यथा ये तो इन्द्र बन जाएगा। मेरी कुर्सी चली जाएगी।

देवताओं की अपनी आयु है। यहाँ तक कि जिन देवताओं का निर्माण ब्रह्मा जी ने किया, उन ब्रह्मा जी की अपनी सौ वर्ष की आयु है। ब्रह्मा जी के वो सौ वर्ष मनुष्यों के खरबों वर्षों के बराबर हैं।
वो दूसरी बात है कि उनका काल भिन्न-भिन्न है किन्तु ब्रह्मा जी भी अपनी आयु के सौ वर्ष पूर्ण होने के पश्चात् अण्ड यानी ब्रह्माण्ड सहित शान्त हो जाते हैं। उस ब्रह्मा को जन्म देने वाले विष्णु न कभी जन्मते हैं और ना कभी मरते हैं।

भगवान् शिव, भगवान् विष्णु और आद्य शक्ति देवी- इनका न कभी जन्म हुआ न ही इनका शरीर कभी मरता है। बाकी सभी देवता कभी न कभी हुए और कभी न कभी नहीं रहेंगे।
जो मरणधर्मा हैं, वो देवता हैं और जो अजन्मा हैं जो कभी पैदा नहीं हुए, वह भगवान् हैं। जैसे आपने कभी सुना है कि शिव जी का जन्म कहाँ हुआ और कब हुआ?
हम ने गणेश जी के जन्म के विषय में सुना है, कार्तिकेय का सुना है, लक्ष्मी जी का सुना है कि समुद्र से आई हैं और भ्रगु की बेटी हैं। पार्वती जी का सुना है कि वे हिमालय व सुनैना की कन्या हैं।
विष्णु भगवान् के पिताजी का नाम सुना?
माता जी का सुना?
शिव जी की माता जी का नाम सुना?
पिताजी का नाम सुना?
देवी के माता-पिता का नाम सुना क्या?
नहीं सुना।

ये सभी अजन्मे हैं। ये हमेशा से हैं और परमब्रह्म परमेश्वर हैं। ये उस ब्रह्म के, परमबह्म के प्रकट स्वरूप हैं। ये भगवान् हैं जो कभी मरते अथवा पैदा होते नहीं और जो मरणधर्मा हैं अर्थात् आए और गए वो देवता हैं।
विष्णु भगवान् के जितने स्वरूप होंगे, राम जी होंगे, कृष्ण होंगे वो सब भगवत् स्वरूप हैं। शिव जी के जितने स्वरूप होंगे वो भगवत् स्वरूप हैं। देवी के जो स्वरूप हैं भगवत् स्वरूप हैं।
बाकी सब देवता हैं। देवता में भी परमेश्वर के परमब्रह्म का भाव करके देखा जाए तो देवता की पूजा भी श्रीभगवान् की पूजा है।

माँ मुरादे पूरी कर दे हलवा बाटूँगी
गीत आता है ना अब बहुत से लोगों का मन इसी में लगा हुआ है।

हारे का सहारा बाबा श्याम हमारा

बहुत से लोगों का मन इसी में अटक गया है। इसमें आपत्ति नहीं है किन्तु मनुष्य इतने में अटक गया कि कहने लगा कि थानेदार साहब आप ही मेरे प्रधानमन्त्री हैं।
तो श्रीभगवान् कहते हैं कि यह अविधिपूर्वक है।

9.24

अहं(म्) हि सर्वयज्ञानां(म्), भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति, तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते।।9.24।।

क्योंकि सम्पूर्ण यज्ञों का भोक्ता और स्वामी भी मैं ही हूँ; परन्तु वे मुझे तत्त्व से नहीं जानते, इसी से उनका पतन होता है।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि सम्पूर्ण कर्मों का भोक्ता और स्वामी भी मैं ही हूँ। जो मुझ परमेश्वर को तत्त्व से नहीं जानते वे पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं।

9.25

यान्ति देवव्रता देवान्, पितॄन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या, यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्।।9.25।।

(सकाम भाव से) देवताओं का पूजन करने वाले (शरीर छोड़ने पर) देवताओं को प्राप्त होते हैं। पितरों का पूजन करने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं। भूत-प्रेतों का पूजन करने वाले भूत-प्रेतों को प्राप्त होते हैं। (परन्तु) मेरा पूजन करने वाले मुझे ही प्राप्त होते हैं।

विवेचन- नियम ऐसा है कि जो देवता को पूजते हैं वह देवता को प्राप्त होते हैं, पितरों को पूजने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं, भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं और मेरा पूजन करने वाले भक्त मुझे प्राप्त होते हैं।
जिन्होंने परमात्मा की आराधना नहीं की, श्रीभगवान् की भक्ति नहीं की, केवल सकाम उपासना देवताओं की भी करी तो उन्हें स्वर्ग धाम मिल जाएगा। वे स्वर्ग लोक पहुँच जाएँगे।

कुछ लोग अपने पितरों की ही पूजा करते हैं और किसी पूजा नहीं करते। उन्हें पितृ लोक का वास मिल जाएगा, वे पितृ लोक पहुँच जाएँगे।

कुछ लोग शमशान में बैठकर भूतों की पूजा करते हैं, खोपड़ी में कुछ रक्त वगैरा भरकर, माँस आदि का भोग लगाते हैं। चाण्डाल और भूतों की पूजा करते हैं, जो एकदम घृणित होती है। अन्त में जो जिसकी पूजा करेंगे, वे उसी के धाम को पहुँच जाएँगे।
देवताओं का पूजन करने वाले देवलोक में पहुँच जाएँगे।
पितरों की पूजा करने वाले पितृलोक में पहुँच जाएँगे।
भूतों का पूजन करने वाला भूत लोक में पहुँच जाएँगे।

सारे देवताओं का जो भगवत् भाव से पूजन करेगा, 'मैं भगवान् की पूजा करता हूँ-' इस भाव से पूजन करेगा, श्रीभगवान कहते हैं, "वह मुझे प्राप्त हो जाते हैं और जो मुझे प्राप्त हो गया उसका पुनर्जन्म नहीं होता।"
(No return ticket) उन्हें फिर वापस नहीं आना पड़ता।

स्वर्ग लोक में जाकर भी वापस आना पड़ता है, नर्क लोग से भी वापस आना पड़ता है, पितृलोक से भी वापस आना पड़ता है, केवल परमात्मा के धाम से वापस नहीं आना पड़ता।
हमने पन्द्रहवें अध्याय में पढ़ा है-

यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।।15.6।।

जहाँ जाकर वापस नहीं आना पड़ता, वह मेरा परमधाम है।

9.26

पत्रं(म्) पुष्पं(म्) फलं(न्) तोयं(यँ), यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं(म्) भक्त्युपहृतम्, अश्नामि प्रयतात्मनः॥9.26॥

जो भक्त पत्र, पुष्प, फल, जल आदि (यथासाध्य एवं अनायास प्राप्त वस्तु) को प्रेमपूर्वक मेरे अर्पण करता है, उस (मुझमें) तल्लीन हुए अन्तःकरण वाले भक्त के द्वारा प्रेमपूर्वक दिये हुए उपहार (भेंट) को मैं खा लेता हूँ अर्थात् स्वीकार कर लेता हूँ।

विवेचन -जो भक्त निष्काम भाव से मेरे लिए प्रेम से पत्र, पुष्प, फल और जल आदि अर्पण करता है, उस भक्त का पत्र, पुष्प इत्यादि मैं सगुण रूप से प्रकट होकर रुचि से खाता हूँ, स्वीकार करता हूँ।

श्रीभगवान् ने द्रौपदी का पत्र स्वीकार किया।
द्रौपदी के अक्षय पात्र से तुलसी का एक पत्ता श्रीभगवान् ने खाया और दुर्वासा ऋषि के दस हजार शिष्यों की भूख मिट गई।

श्रीभगवान् ने गजेन्द्र का पुष्प स्वीकार किया। गजेन्द्र हाथी है, मगरमच्छ ने उसका पैर पकड़ा हुआ है। उस समय श्रीभगवान् को याद कर वह कमल का पुष्प श्रीभगवान् को अर्पित करता है। फूल स्वीकार करने श्रीभगवान् गरुड़ पर बैठकर आते हैं। मगरमच्छ का वध करके गजेन्द्र का उद्धार करते हैं।

फूल तो छोड़िए शबरी ने तो उन्हें झूठे बेरों का भोग लगाया, वह भी उन्होंने स्वीकार किया।

धन्ना जाट की कथा
राजस्थान के टोङ्क जिले में धुआँकला नाम का गाँव है। वहाँ पर धन्ना नाम का एक एक जाट रहता था। स्वभाव से भोला था और हृदय से निर्मल और बहुत पवित्र था। वह प्रेम, भक्ति श्रद्धा का अद्भुत प्रतीक बन गया।
समय आने पर भाईयों में सम्पत्ति का बँटवारा हुआ। धन्ना के हिस्से में गाय आई।
गाँव में एक पण्डित जी थे, कुछ लालची थे। जैसे ही उन्हें पता चला कि भाईयों में बँटवारा हुआ है और धन्ना के हिस्से में गाय आई है, पण्डित जी तुरन्त धन्ना के पास पहुँचे।
धन्ना ने प्रणाम किया और कहा "पण्डित जी पधारो, कैसे आना हुआ?"
पण्डित जी बोले - "सुना है बँटवारे में तुम्हारे हिस्से में गाय आई है।"
धन्ना ने कहा, "जी हाँ।"
पण्डित जी बोले "तुम्हें पता है कि तुम्हारी गाय का दूध भगवान् को बहुत प्रिय है। इस गाँव के मन्दिर के ठाकुरजी हैं वो तुम्हारी गाय का दूध पीते हैं।"
धन्ना आश्चर्य से बोला कि पण्डित जी आप सच कह रहे हो? गाँव के ठाकुरजी मेरी गाय का दूध पीते हैं?
पण्डित जी बोले, "हाँ, उनको इतना प्रिय है कि यदि मैं दूसरी गाय का दूध लाऊँ तो वह पीते ही नहीं है।"
दोनों आँखें बड़ी करके धन्ना बोला, "पण्डित जी आप सच कह रहे हो, ठाकुरजी मेरी गाय का दूध पीते हैं? मैं तो आज तक मन्दिर भी नहीं गया।"
पण्डित जी बोले, "इसलिये तो मैं तुम्हारे पास आया हूँ कि गाय तुम्हारे हिस्से में आई है तो क्या तुम अब दूध दोगे या मैं ठाकुरजी को बोल दूँ कि अब वह दूध नहीं देगा।"
धन्ना ने कहा कि पण्डित जी आप कैसी बात करते हो यदि ठाकुरजी मेरी गाय का दूध पीते हैं तो मैं प्रतिदिन ही आपको इस गाय का दूध दे दूँगा। आप जितना भी दूध ठाकुरजी माँगेंगे उतना ही ले जाना। ठाकुरजी मेरी गाय का दूध पीते हैं इससे बड़ी मेरे लिए क्या बात हो सकती है?
उसके मन में आनन्द हुआ। वह प्रतिदिन ही पण्डित जी के लिए दूध ले जाने लगा।
एक बार पण्डित जी को किसी के ब्याह में तीन-चार दिन के लिए दूसरे गाँव जाना पड़ा। उन्होंने धन्ना को तीन-चार दिन तक दूध देने के लिए मनाकर दिया। धन्ना ने कहा कि आप तीन-चार दिन के लिए दूसरे गाँव जाओगे तो ठाकुरजी इतने दिन भूखे

रहेंगे?

उसका निर्मल भाव था कि ठाकुरजी मेरी ही गाय का दूध पीते हैं।
पण्डित जी तो भूल गए थे कि उन्होंने ऐसा कहा था। धन्ना ने कहा कि पण्डित जी आप जाओ, ठाकुरजी को दूध मैं पिला दिया करूँगा।
पण्डित जी ने कहा कि तू जाट है, मन्दिर के गर्भगृह में मेरे अतिरिक्त कोई नहीं जा सकता। धन्ना बोला ऐसे तो ठाकुरजी भूखे रहेंगे। इसका कुछ उपाय तो करना पड़ेगा।
धन्ना ने कहा कि मैं मन्दिर नहीं जा सकता तो तुम ठाकुरजी को मेरे पास ले आओ। पण्डित जी बोले, क्या तुम ठाकुरजी को सम्भाल पाओगे? क्या तुम्हें उसके नियम पता हैं?
धन्ना बोला कि तुम सभी नियम मुझे बता दो। मैं सभी स्मरण कर लूँगा परन्तु यह बात पक्की समझो कि ठाकुर जी भूखे नहीं रहेंगे। उसके लिए चाहे कुछ भी करना पड़े।

अब तो पण्डित जी चक्कर में पड़ गए। बोले ठीक है मैं अभी ठाकुरजी को लेकर आता हूँ। रास्ते में जाते-जाते उन्हें काले रङ्ग का एक पत्थर मिल गया। पत्थर को लेकर मन्दिर में गए और उसे एक वस्त्र में रखकर चन्दन तिलक लगाया, थोड़े पुष्प रखकर इत्र लगाया, शालिग्राम का रूप बनाकर टोकरी में रखकर धन्ना को दे दिया। पण्डित जी ने कहा कि तुम हठ करते हो तो ठाकुरजी को तुम्हारे पास ले आया हूँ किन्तु पहले उनके नियम सुन लो।

ठाकुरजी को तभी अपने हाथ में लेना जब उनके नियमों का वचन तुम दो कि मैं यह कर सकूँगा।
धन्ना बोला कि पण्डित जी बताओ इसके क्या-क्या नियम हैं?
पण्डित जी बोले की सुबह पाँच बजे जागकर स्नान करने के बाद श्रीभगवान् को स्नान कराना होगा। फिर श्रीभगवान् को तिलक करना होगा, फिर उन्हें भोग लगाना होगा। भोग से पहले पर्दा लगाना होगा।
पण्डित जी ने एक बहुत लम्बी चौड़ी सूची बनाकर धन्ना को बताई कि वह घबरा कर मना कर दे। जितने नियम पण्डित जी स्वयं भी नहीं करते थे, उनसे भी अधिक नियम उन्होंने धन्ना को बता दिए परन्तु धन्ना तो निर्मल और पवित्र मन का था और जाट बुद्धि का था तो ठान लिया कि यह सब तो करना ही है।

पण्डित जी ने बोला कि सोच लो कि यह सब कर पाओगे। धन्ना ने कहा, "हाँ पण्डित जी! आपने जितनी भी बातें बताई हैं, मैं सभी बातें पूरी करूँगा।"
पण्डित जी ने कहा, "तुम यह सब बोल कर बताओ कि मैंने क्या-क्या कहा।" धन्ना ने आरम्भ से अन्त तक सभी बातें पण्डित जी को बता दीं। पण्डित जी परेशान हो गए। उन्हें लगा था कि वह ये बातें स्मरण नहीं कर सकता है।

पण्डित जी ने उन्हें ठाकुरजी दे दिए। जैसे ही धन्ना ने ठाकुरजी को हाथ में लिया तो उसकी पूर्व जन्म की भक्ति जागृत हो गई। ठाकुरजी को हाथ में लेते ही उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। वह बोला कि आज तक तो मैं मन्दिर दर्शन करने भी नहीं गया और आज ठाकुरजी मेरे घर में और मेरे हाथ में आ गए। वह माँ के पास गया और बोला कि देखो माँ ठाकुरजी हमारे घर आए हैं। वह ठाकुरजी को लेकर नाचने लगा।

उसने एक मेज पर आसन लगाकर ठाकुरजी को उस पर रखा और उन्हें निहारने लगा और सोचने लगा कि इतने छोटे से ठाकुरजी एक लोटा दूध कैसे पीते होंगे और पण्डित जी ने यह भी बोला था कि दूध के साथ एक थाली भोजन भी खिलाना होगा। धन्ना ने माँ से कहा कि दूध तो मैंने निकाल रखा है। अब आप एक भोजन की थाली बना दो। मैं ठाकुरजी को भोग लगाऊँगा। माँ ने भोजन बना दिया। धन्ना खाना लेकर ठाकुरजी के आगे बैठ गया और टकटकी लगाकर उन्हें देखने लगा। उसे लगा ठाकुरजी अभी भोजन करेंगे और दूध पियेंगे। मन ही मन कह रहा है ठाकुरजी भोजन कर लीजिए और दूध पी लीजिए।

पन्द्रह-बीस मिनट तक जब कुछ भी नहीं हुआ तो एकदम ध्यान आया कि पण्डित जी ने कहा था कि पहले पर्दा लगाना पड़ेगा। उसने माँ की साड़ी से पर्दा किया और पीठ घुमाकर बैठ गया क्योंकि पण्डित जी ने कहा था कि ठाकुरजी को भोग लगाते हुए देखते नहीं है। फिर बोला ठाकुर जी मैं आपको नहीं देख रहा हूँ अब आप भोजन कर लीजिए।

बहुत देर हो गई तो माँ ने पूछा कि क्या हुआ? उसने कहा मैंने भोग तो लगा दिया परन्तु ठाकुरजी खा नहीं रहे हैं। माँ ने कहा ठीक है भोग लग गया, वह खाएँगे नहीं। उसने कहा कि माँ तुम्हें भी नहीं पता तुम कभी मन्दिर भी नहीं गई हो। माँ ने कहा बेटा ठाकुरजी को भोग दिखाना ही होता है वह खाते नहीं है। धन्ना बोला माँ तुम्हे नहीं पता ठाकुरजी भोजन करेंगे। माँ ने कहा कि चलो कोई बात नहीं। अब तुम खा लो। धन्ना बोला कि माँ ठाकुरजी ने तो अभी नहीं खाया मैं कैसे खा लूँ?
धन्ना ने ठाकुरजी को बहुत कहा परन्तु ठाकुरजी ने भोजन नहीं किया। उसने सोचा शायद आज ठाकुरजी को भूख नहीं होगी। वह प्रतीक्षा करता रहा और उसे वहीं नींद आ गई।

जीवन में पहली बार ऐसा हुआ होगा कि पाँच बार खाने वाले धन्ना ने खाना ही नहीं खाया। सुबह पाँच बजे उठा और कुएँ पर जाकर स्नान किया और एक बाल्टी पानी भर कर ठाकुरजी के लिए लाया और मखमल के वस्त्र को खोला और जैसा उसे समझ आया वैसे ठाकुरजी को स्नान कराया। उसे तिलक का पता नहीं था तो उसने मिट्टी का तिलक लगाया और फूल और अगरबत्ती चढ़ाई और माँ से बोला थाली लगा दो ठाकुरजी को भोग लगाना है। माँ ने कहा कि रात वाली थाली कहाँ है उसे ले आओ। उन्होंने धन्ना से पूछा कि तुमने भी रात को भोजन नहीं किया तो वह उदास हो गई।
धन्ना फिर थाली लेकर भगवान् को भोग लगाने के लिए बैठा। वह बहुत उदास था कि ठाकुरजी भोजन नहीं कर रहे हैं। माँ ने फिर धन्ना से कहा कि बेटा खाना खा लो। धन्ना ने कहा कि जब तक ठाकुरजी नहीं खाएँगे तो मैं भी नहीं खाऊँगा। शाम को दूध निकाला फिर भोग लगाने के लिए आया। रात में फिर थाली लगाकर भोग लगाने के लिए आया। चौबीस घण्टे से भी ज्यादा हो गए। धन्ना ने भोजन तो छोड़ो जल का एक घूँट भी नहीं पिया। माँ को अच्छा नहीं लगा कि जिस व्यक्ति ने कभी एक घण्टा भी उपवास नहीं किया वह आज चौबीस घण्टे से भूखा बैठा है।

वह ठाकुरजी से कहता रहा किन्तु ठाकुरजी ने भोग नहीं लगाया। उसे भूख लगने लगी, पीड़ा भी होने लगी थी और रात को सोया भी नहीं था। वह ठाकुरजी को देखकर रोने लगा और कहा कि ठाकुरजी आप मेरे घर में हो और भूखे हो। आप कुछ तो खा लो या दूध पी लो। वह रोने लगा और रोते-रोते उसे नींद आ गई।

जब सुबह उठा तो उससे चला नहीं जा रहा था। बड़ी कठिनाई से उसने स्नान किया और ठाकुरजी को स्नान कराया, मिट्टी का तिलक लगाया और दूध निकालने चला गया। माँ ने भोजन बनाया और वह भोग लगाने के लिए भगवान् के लिए पर्दा लगाकर प्रतीक्षा करने लगा। पूरा दिन भगवान् को मनाते और बातें करते बीत गया। माँ ने बहुत समझाया परन्तु वह नहीं माना और फिर भगवान् के आगे रोते-रोते फिर सो गया।
अगले दिन फिर उठकर स्नान करने गया तो उसमें इतनी भी शक्ति नहीं थी कि वह कुएँ से पानी निकाल सके। उसमें बाल्टी से पानी को खींचने की शक्ति भी नहीं बची थी। थोड़े से पानी से स्नान किया और बचा हुआ पानी अपने ठाकुरजी के स्नान के लिए लाया। फिर स्नान कराया, तिलक लगाकर पुष्प चढ़ाए और फिर भोग लेकर बैठ गया। उसे लगा उससे कुछ गलती हो गई है जिस कारण ठाकुरजी भोग स्वीकार नहीं कर रहे। पण्डित जी ने कहा था कि मैं जाट हूँ पर ठाकुरजी तो जाति का विचार नहीं करते। माँ ने जब उसका चेहरा देखा तो वह भी रोने लगी कि बेटा मान जा, खाना खा ले, परन्तु उसने कहा कि यदि मैं मर भी जाऊँ तो कोई बात नहीं परन्तु जब तक ठाकुरजी भोजन नहीं करेंगे मैं भी नहीं खाऊँगा।

तीसरा दिन भी बीतने लगा। उसने तीन दिन से जल भी नहीं लिया था और उसने कहा ठाकुरजी मुझे पता है तुम मेरे हाथ से नहीं खाओगे क्योंकि मैं पण्डित नहीं हूँ। परन्तु मैंने तो सुना था कि भगवान् के घर में सब एक समान हैं।
मैं जाट हूँ इसलिये तीन दिन से आप भूखे हो और ज़िद(हठ) करके खाना नहीं खा रहे हो। जब इस शरीर का छुआ तुम खा नहीं सकते तो इस शरीर का क्या काम है। क्या लाभ है इस शरीर का? जिसके घर में ठाकुरजी हों और वह खाना भी न खाएँ।

आवेश में आकर उसने अपना माथा ठाकुरजी के पत्थर पर दे मारा और कहा कि यदि आज नहीं माने तो मैं यहीं अपने प्राणों को त्याग दूँगा और इतना कहकर उसने दोबारा अपने माथे को उस पत्थर पर मारा। उसके माथे से खून निकलने लगा। जैसे ही उसने अगली बार फिर से माथा मारने का प्रयास किया तो साक्षात् भगवान् नारायण वहाँ प्रकट हो गए। उसके माथे को भगवान् ने सहलाया जिससे उसका दर्द कम हो गया। वह जोर से रोने लगा कि ठाकुरजी ने तीन दिन से खाना नहीं खाया। आप किस बात की प्रतीक्षा कर रहे थे? क्या आपको पता है कि मैंने भी तीन दिन से कुछ नहीं खाया?

भगवान् ने मुस्कुराकर धन्ना की ओर देखा और कहा कि धन्ना तुम मेरी परीक्षा में उत्तीर्ण हो गए। कहते हैं कि ठाकुरजी ने उसी

थाली में भोजन किया और धन्ना को भी उसी थाली से भोजन करवाया।

कहते हैं कि भगवान् सात दिन तक धन्ना के घर में रहे। सातवें दिन जब पण्डित जी लौटकर आए और उन्हें पता चला कि इतनी सारी बातें हुई हैं तो वे भी रोने लगे। धन्ना से बोले कि मेरा ब्राह्मण जीवन ही बेकार है। मैं उस भगवान् में जीवन-भर पत्थर देखता रहा। मैंने तुझे एक पत्थर दिया था और उसमें तुझे भगवान् मिल गए। धन्ना की भक्ति भाव से पण्डित जी को वैराग्य हो गया। वह उसी समय मन्दिर का कार्यभार अपने पुत्र को सौंप कर तपस्या करने हिमालय चले गए।

यह कथा गुरुग्रन्थ साहिब में आती है, गुरु नानक जी ने लिखी है।
उस गाँव में धन्ना जाट का मन्दिर है और उसी के नाम का गुरुद्वारा भी है। उसे गाँव के लोग स्वयं को धाननवंशी कहलाते हैं।

भगवान् खाते नहीं है ऐसी बात नहीं है हम खिलाना तो सीखें। भोग लगने की भी हमें इतनी जल्दी होती है कि भगवान् हाथ बढ़ाकर खाएँ उससे पहले तो हम थाली हटा लेते हैं।
श्रीभगवान् को भोग भी दिखाएँ तो थोड़ा भाव से दिखाएँ। जो भोग हम भगवान् के सामने रखते हैं, वह सूक्ष्म रूप से उसको ग्रहण करते हैं। वह प्रसाद बन जाता है क्योंकि श्रीभगवान् की प्रसन्नता उसमें होती है।

9.27

यत्करोषि यदश्नासि, यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय, तत्कुरुष्व मदर्पणम्।।9.27।।

हे कुन्तीपुत्र ! (तू) जो कुछ करता है, जो कुछ भोजन करता है, जो कुछ यज्ञ करता है, जो कुछ दान देता है (और) जो कुछ तप करता है, वह (सब) मेरे अर्पण कर दे।

विवेचन- इसलिए हे अर्जुन! जो कुछ भी तुम कर्म करते हो, जो भी खाते-पीते हो, जो कुछ भी दान देते हो, जो भी तप करते हो वह सब कुछ मुझे अर्पण कर दो।

9.28

शुभाशुभफलैरेवं(म्), मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
सन्न्यासयोगयुक्तात्मा, विमुक्तो मामुपैष्यसि।।9.28।।

इस प्रकार (मेरे अर्पण करने से) कर्म बन्धन से और शुभ (विहित) और अशुभ (निषिद्ध) सम्पूर्ण कर्मों के फलों से (तू) मुक्त हो जायगा। ऐसे अपने सहित सब कुछ मेरे अर्पण करने वाला (और) सबसे सर्वथा मुक्त हुआ (तू) मुझे प्राप्त हो जायगा।

विवेचन- इस प्रकार जिसके समस्त कर्म मुझ भगवान् में अर्पण होते हैं, ऐसे संन्यास-योग चित्त वाले तुम हर कर्म के शुभ-अशुभ से मुक्त हो जाओगे और तुम मुझको ही प्राप्त होंगे।

9.29

समोऽहं(म्) सर्वभूतेषु, न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां(म्) भक्त्या, मयि ते तेषु चाप्यहम्।।29।।

मैं सम्पूर्ण प्राणियों में समान हूँ। (उन प्राणियों में) न तो कोई मेरा द्वेषी है (और) न कोई प्रिय है। परन्तु जो प्रेमपूर्वक मेरा भजन करते हैं, वे मुझ में हैं और मैं भी उनमें हूँ।

विवेचन - श्रीभगवान् कह रहे हैं कि हे अर्जुन, मैं सम्पूर्ण भूतों में समान रूप से व्याप्त हूँ। ना कोई मेरा अप्रिय है और न कोई मेरा प्रिय। परन्तु जो भक्त मुझे प्रेम से भजते हैं, मैं उनमें और वे मुझ में वास करते हैं।

इसीलिए हमारे यहाँ भगवत् कृपा प्राप्त साधु सन्तों को पूजा जाता है। उन्हें भगवान के रूप में पूजा जाता है।
हम श्रीभगवान् के चित्र मन्दिर में रखते हैं। तत्वज्ञानी महापुरुष की पूजा करते हैं क्योंकि श्रीभगवान् ने स्वयं कहा कि वे उनमें प्रकट हो जाते हैं।
किसी सन्त को देखने से भी श्रीभगवान् के दर्शन हो जाते हैं, सीधे श्रीभगवान् को देखने की आवश्यकता नहीं है।

9.30

अपि चेत्सुदुराचारो, भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः(स्), सम्यग्व्यवसितो हि सः।।9.30।।

अगर (कोई) दुराचारी से दुराचारी भी अनन्य भक्त होकर मेरा भजन करता है (तो) उसको साधु ही मानना चाहिये। कारण कि उसने निश्चय बहुत अच्छी तरह कर लिया है।

विवेचन - हे अर्जुन! मेरी भक्ति का प्रभाव सुनो। संसार में दुराचारी से भी दुराचारी या फिर कितना भी बड़ा पापी हो, यदि वह अनन्य भाव से मेरी भक्ति करता है तो उसे साधु मानना चाहिए।
यदि उसने यह भी निश्चय कर लिया है कि अब वह और पाप नहीं करेगा और श्रीभगवान् की प्राप्ति के सिवा उसे और कुछ नहीं चाहिए तो ऐसा व्यक्ति साधु मानने योग्य है।
जीवन में कभी ऐसे व्यक्ति मिलते हैं जिन्होंने अपने पूर्व जीवन में बहुत से गलत काम किए हों तब भी उस विषय में हमें नहीं सोचना है।
श्रीभगवान् स्वयं भी कहते हैं कि मैं भी उसकी चिन्ता नहीं करता। जिस किसी ने भी पूर्व जीवन में कुछ गलतियाँ की हैं, अब नहीं करते और आगे की सम्भावना नहीं है तो ऐसा व्यक्ति साधु है।
कोई भी व्यक्ति जिस क्षण मेरे सामने समर्पित होकर अपने पापों को छोड़ देता है, वह तभी से मेरा अनन्य भक्त हो जाता है।

9.31

क्षिप्रं(म्) भवति धर्मात्मा, शश्वच्छान्तिं(न्) निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि, न मे भक्तः(फ्) प्रणश्यति।।9.31।।

(वह) तत्काल (उसी क्षण) धर्मात्मा हो जाता है (और) निरन्तर रहने वाली शान्ति को प्राप्त हो जाता है। हे कुन्तीनन्दन ! मेरे भक्त का पतन नहीं होता (ऐसी तुम) प्रतिज्ञा करो।

विवेचन - "हे अर्जुन! वह व्यक्ति तत्काल रूप से धर्मात्मा हो जाता है। वह सदा रहने वाली शान्ति को भी प्राप्त कर लेता है और उसका कभी पतन नहीं होता।
हे अर्जुन! मैं निश्चय पूर्वक कहता हूँ, मेरे ऐसे भक्त का नाश नहीं होता।"
जो भगवान् की भक्ति करते हैं, गीता का पाठ करते हैं, उन्हें श्रीभगवान् वचन देते हैं कि ऐसे भक्त का नाश कभी नहीं होगा।

इसलिए जीवन में कभी श्रीभगवान् का नाम नहीं छोड़ना चाहिए। गीता पाठ नहीं छोड़ना चाहिए। ऐसे जीवों का कल्याण निश्चित है।
जिन्होंने गीता को अपने गले लगा लिया तो निश्चित रूप से यह जान लो कि अगला जीवन मनुष्य का ही होगा अर्थात् ऐसे व्यक्ति श्रीभगवान् के धाम पहुँच जाते हैं तो ठीक है। उनका मनुष्य जन्म तो निश्चित है।

9.32

मां(म्) हि पार्थ व्यपाश्रित्य, येऽपि स्युः(फ्) पापयोनयः।

स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्राः(स्), तेऽपि यान्ति परां(ङ्) गतिम्।।9.32।।

हे पृथानन्दन ! जो भी पाप योनि वाले हों (तथा जो भी) स्त्रियाँ, वैश्य और शूद्र (हों), वे भी सर्वथा मेरे शरण होकर निःसन्देह परमगति को प्राप्त हो जाते हैं।

विवेचन - हे अर्जुन! कोई स्त्री हो, वैश्य हो, शूद्र हो या फिर पाप योनि वाले हो, वे पूर्ण रूप से मेरी शरण होकर नि:सन्देह परम गति को प्राप्त हो जाते हैं।

इस श्लोक का कुछ लोग चूक अर्थ भी निकाल लेते हैं। श्रीभगवान ने स्त्री, वैश्य और शूद्र को पाप योनि वाले कहा ऐसा नहीं है। श्रीभगवान् कहते हैं चाहे स्त्री हो, चाहे वैश्य हो या चाहे शूद्र हो या फिर चाण्डाल और पाप योनि में भी जन्म लिया हो, यदि मेरी शरण को प्राप्त हो जाता है तो भी वह परम गति को प्राप्त हो जाता है। इस में कोई संशय नहीं है।

आज से इक्यावन सौ साल पहले भी बोलने वाले लोग थे, जो कहते थे कि स्त्री को पूजा और भक्ति करने का अधिकार नहीं है। कभी कोई यह भी पूछ लेता है कि क्या स्त्रियों को गुरूजी बना सकते हैं?

यहाँ श्रीभगवान् कहते हैं कि उनकी भक्ति का अधिकार सभी को है। श्रीभगवान् अर्जुन को आगे कहते हैं।

9.33

किं(म्) पुनर्ब्राह्मणाः(फ्) पुण्या, भक्ता राजर्षयस्तथा।
अनित्यमसुखं(म्) लोकम्, इमं(म्) प्राप्य भजस्व माम्।।9.33।।

(जो) पवित्र आचरण वाले ब्राह्मण और ऋषिस्वरूप क्षत्रिय भगवान् के भक्त हों, (वे परम गति को प्राप्त हो जायँ) इसमें तो कहना ही क्या है। (इसलिये) इस अनित्य (और) सुखरहित शरीर को प्राप्त करके (तू) मेरा भजन कर।

विवेचन - पुण्यशील ब्राह्मण! राजर्षि रूप क्षत्रिय! स्त्री, वैश्य, शूद्र, पाप योनि में जन्म लेने वाला प्रत्येक व्यक्ति मेरी शरण को प्राप्त कर सकता है।

अर्जुन के पिता, पाण्डु ने राजा होते हुए भी वन में जाकर तप किया इसलिए वे राजऋषि कहलाए।
श्रीभगवान् कहते हैं कि अर्जुन, तुम तो राजर्षि के पुत्र हो, तुम मेरी शरण को प्राप्त कर सकते हो। तुम क्षणभङ्गुर, सुख रहित शरीर को प्राप्त करके मेरा भजन करो।
यह कहकर श्रीभगवान् यहाँ इस अध्याय का समारूप करते हैं।

सबसे विशिष्ट बात यह है कि श्रीमद्भगवद्गीता दैवीय हैं और उनका अध्ययन होता है।
नवें अध्याय के चौंतीसवे श्लोक और अट्ठारहवें अध्याय के पैंसठवें श्लोक की पहली पङ्क्ति एक जैसी है।

श्रीभगवान् ने तो यहाँ भगवद्गीता को पूर्ण कर लिया था। अर्जुन की और जानने की इच्छा होने के कारण उन्होंने आगे की बात कही।

9.34

मन्मना भव मद्भक्तो, मद्याजी मां(न्) नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवम्, आत्मानं(म्) मत्परायणः।।9.34।।

(तू) मेरा भक्त हो जा, मुझमें मन वाला हो जा, मेरा पूजन करने वाला हो जा (और) मुझे नमस्कार कर। इस प्रकार अपने-आपको (मेरे साथ) लगाकर, मेरे परायण हुआ (तू) मुझे ही प्राप्त होगा।

विवेचन - श्रीभगवान् अर्जुन को कहते हैं, "तुम मुझमें मन लगाने वाले हो जाओ।" यहाँ कई लोगों को सन्देह भी हो जाता है। श्रीभगवान् कह रहे हैं कि मुझ में मन लगाओ, तो क्या इसका अर्थ यह कि श्रीकृष्ण में मन लगाओ?

जी नहीं! एक लाख श्लोकों की महाभारत है। इनमें जब भी भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा श्लोकों का वर्णन आया तो वेदव्यास जी ने, केशव उवाच, कृष्ण उवाच, वासुदेव उवाच का नाम दिया।
केवल इन अट्ठारह अध्यायों में वेदव्यास जी ने केशव, कृष्ण, वासुदेव न कहते हुए श्रीभगवानुवाच कहा है। यहाँ वे कृष्ण के रूप में न बोलते हुए, श्रीभगवान् परमात्मा के रूप में बोले हैं इसलिए जिसके राम उनके लिए राम उवाच, जिसके कृष्ण उनके लिए कृष्ण उवाच, जिसके शिव उनके लिए शिव उवाच आदि।

आपके जो इष्ट हैं, आपको उन्हीं का बोलना समझना है। जिनके नारायण इष्ट तो नारायण उवाच, जिनके विष्णु इष्ट तो विष्णु उवाच।

मुझ में मन लगाने वाले बनो, मेरे भक्त बनो, मेरा पूजन करो, मुझे प्रणाम करो। अपनी आत्मा को नित्य मुझ में लगाओ। जो मुझको प्रणाम कर रहा है, वह स्वयं को ही देख रहा है क्योंकि मैं और वह अलग नहीं हैं।

इस तरह से हे अर्जुन, तुम अपने स्वरूप को ही प्राप्त हो जाओगे। जब तुम मुझे जान लोगे, तो अपने आप को ही जान लोगे।

पन्द्रहवें अध्याय का सातवाँ श्लोक है

"ममैवांशो जीवलोके, जीवभूतः(स्) सनातनः।
मनः(ष्) षष्ठानीन्द्रियाणि, प्रकृतिस्थानि कर्षति॥१५.७॥
श्रीभगवान् कहते हैं कि तुम मेरे ही तो अंश हो।

जब अपना हाथ अपनी आँखों को प्रणाम करेगा तो क्या होगा? कोई स्वयं से स्वयं को ही प्रणाम कर रहा है, यही तो होगा। हम जब भी प्रणाम करते हैं तो अपने अन्दर स्थित भगवान् को ही प्रणाम करते हैं।

इसके साथ ही इस अध्याय के सारगर्भित विवेचन का समापन हुआ और प्रश्नोत्तर आरम्भ हुए।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता- वाणी दीदी
प्रश्न -आपने अभी द्रौपदी का प्रसङ्ग सुनाया और बताया कि भगवान् ने द्रौपदी की सहायता शुरू में इसलिए नहीं की क्योंकि द्रौपदी ने भगवान् को नहीं पुकारा था तो क्या भगवान् पुकारने से ही आते हैं?
क्या हमें खुद अपना सहायता करने का प्रयास नहीं करना चाहिए? अंग्रेजी में कहते भी हैं - (God help those who help themselves) भगवान् उन्हीं की सहायता करते हैं जो अपनी सहायता आप करते हैं तो फिर इसका क्या अर्थ है? हमें अपने आप को भगवान् को कब समर्पित करना चाहिए?
उत्तर - इसमें गलत कुछ भी नहीं है। हम जब स्वयं प्रयत्न करते हैं तो उसे अपनी शक्ति मानकर करते हैं। यदि हम उसे भी भगवान् की ही शक्ति मानकर करें तो फिर वह अलग बात नहीं रह जाती। हम यदि यह मान लें कि यह जो पति हमें मिले हैं, यह भगवान् के दिए हुए हैं या यह जो ससुर हैं, यह भी हमें भगवान् ने ही प्रदान किए हैं।
हमारे हाथों में जो बल है वह भी भगवान् का ही दिया हुआ है। हम उस बल को अपना मानते हैं और वहीं पर गलती हो जाती है। जहाँ व्यक्ति के अन्दर मैं-पन आ जाता है तो भगवान् उस से दूर हो जाते हैं।
जब हम अपने को भगवान् को समर्पित कर देते हैं तो भगवान् हमारी शक्ति बनकर आ जाते हैं। हमें पहली बार में ही अपने को भगवान् को समर्पित कर देना चाहिए।

द्रौपदी ने सबसे अन्त में भगवान् को समर्पण किया और तब भगवान् प्रकट हुए।

हमारे इतने पुण्य नहीं है कि हमारे पुकारने पर भगवान् आ जाएँ। हमें सदा भगवान् का आश्रय लेना चाहिए।

प्रश्नकर्ता- वाणी दीदी
प्रश्न - कुछ लोग कहते हैं कि गुरु को जरूर अडॉप्ट (adopt) करना चाहिए। गुरु को अपनाना चाहिए। अगर अभी तक हमें गुरु नहीं मिले हैं तो हमें क्या करना चाहिए?
उत्तर - गुरु को अडॉप्ट नहीं किया जाता, गुरु हमें अडॉप्ट करते हैं। इसका अर्थ है कि गुरु हमें अपना शिष्य बनाते हैं और अपनाते हैं।

यदि गुरु नहीं मिले हैं तो गुरु की खोज करनी चाहिए।
जैसे कोई बीमारी होने पर हम उत्तम डॉक्टर की खोज करते हैं वैसे ही गुरु को ढूँढना होगा। भारत भूमि पर सच्चे गुरुओँ की कोई कमी नहीं है। लोग ऐसे गुरुओँ के पीछे भागते हैं जिनकी टीवी पर ज्यादा फोटो आती है या जिन गुरुओं के पास ज्यादा पैसा है या जिनके बड़े-बड़े आश्रम हैं। इस वैभव और ऐश्वर्य को देखकर किसी को गुरु नहीं बनना चाहिए। गुरु का वैभव देखकर यदि उसे चुनोगे तो तुम्हें संसार का वैभव ही मिलेगा।

गुरु को ढूँढते समय चार बातों का विशेष ध्यान रखें ।
1. वह स्वयम्भू गुरु न हों। मान लीजिए आपने मुझसे कहा कि आशु भैया आप बहुत अच्छा प्रवचन करते हैं, आप मेरे गुरु हो जाओ और मैं आपका गुरु बन गया तो यह सही नहीं है। मेरे गुरुजी ने अभी मुझे दीक्षा देने की अनुमति नहीं दी है। जब मेरे गुरुजी मुझे यह अनुमति दे देंगे कि मैं आगे दीक्षा दे सकता हूँ तभी मुझे दीक्षा देनी चाहिए। उससे पहले मुझे दीक्षा देने का कोई अधिकार नहीं है।
आजकल हजारों की सङ्ख्या में स्वयम्भू गुरु हैं जो स्वयं ही गुरु बने बैठे हैं। वे अपने आप को ही आचार्य और जगतगुरु लिखने लगते हैं। वे स्वयं अपने आप को ही अनेक उपाधियाँ दे रहे हैं, यह अजीब पागलपन आजकल चल रहा है।

2. गुरु परम्परा का विचार करना चाहिए कि यह गुरु कब से बने हुए हैं? उनके गुरु कौन थे और उनके गुरु के गुरु कौन थे? यह सब देखकर ही गुरु बनाना चाहिए।
आपके गुरु हमेशा किसी न किसी मठ, सम्प्रदाय या आचार्य से जुड़े हुए होने चाहिए। उनकी दीर्घकालिक हजारों साल पुरानी परम्परा होनी चाहिए तभी वह गुरु बनने के योग्य हैं।

3. गुरु को शास्त्र और वेदों का पूरा ज्ञान होना चाहिए। ऐसा न हो कि उन्हें वेदों और उपनिषदों का कोई ज्ञान ही न हो। वे शास्त्रों को पढ़ने और पढ़ाने के लिए योग्य होने चाहिए।

4. आपको यह ध्यान रखना है कि वह आपको अपनी पूजा में लगा रहे हैं या भगवान् की पूजा में लगा रहे हैं। जो अपनी पूजा में लगाते हैं, वह सच्चे गुरु नहीं है। जो आपको भगवान् की पूजा में लगाते हैं, वही सच्चे गुरु हैं।

इन चार बातों का ध्यान करते हुए हमें गुरु बनाने चाहिए। हमारे देश में सद्गुरुओं की कोई कमी नहीं है परन्तु आपको उनको ढूढना होगा।

हमें पूज्य स्वामी जी जैसे निस्पृह महात्मा को ही अपना गुरु बनाना चाहिए। सदा किसी तत्व ज्ञानी महात्मा को ही अपना गुरु बनाना चाहिए।
जीवन में प्रगति करने के लिए गुरु की बहुत आवश्यकता है। गुरु के बिना आपको ज्ञान की प्राप्ति नहीं होगी। जिस प्रकार किसी विषय में पास होने के लिए आपको शिक्षक की आवश्यकता होती है उसी प्रकार इस जीवन में गुरु के बिना ज्ञान नहीं मिलेगा। यदि इस जन्म में गुरु नहीं मिले तो अगले जन्म में मिलेंगे पर मिलेंगे जरूर।

इसके उपरान्त श्री हनुमान चलीसा पाठ के साथ आज के विवेचन सत्र का समापन हुआ।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(यँ) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्याय:।।

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'राजविद्याराजगुह्ययोग' नामक नवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||